Dr. Vandana Suman
Associate professor
Dept. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara
M. A semester – 1 Philosophy CC-04
Indian and western Ethics

1 "Ethical Concept of Geeta : Loka Sangraha"

'लोक-संग्रह' का अर्थ है— सम्पूर्ण लोक अर्थात् सम्पूर्ण समाज के हित के लिए कार्य करना। वस्तुतः लोक-संग्रह ही भगवद्गीता का सर्वोच्च सामाजिक आदर्श है। बिना किसी भेदभाव के अपने समान सबको समझकर सभी लोगों की भलाई के लिए कर्मशील व्यक्ति ही लोक-संग्रह का कार्य करता है। गीता कर्म-संन्यास अर्थात् कर्म-त्याग की निन्दा करती है तथा कर्मयोग की प्रशंसा करती है। गीता के अनुसार मनुष्य को प्रकृति द्वारा निर्धारित स्वधर्म अर्थात् अपना कर्म जो वस्तुतः नियत कर्म है अवश्य करना चाहिए, किन्तु यहाँ गीता इस बात पर भी बल देती है कि मनुष्य के कर्म अपने हित के लिए नहीं वरन् लोक-संग्रह के लिए होने चाहिए क्योंकि यह सारा जगत ईश्वर में ओत-प्रोत है तथा सभी आत्माओं में उसी परमसत्ता का वास है, अतः हमें सबको अपने ही समान समझते हुए सबके हित के लिए कार्य करना चाहिए। सच्चा योगी सर्वभूतहितरत रहता है। लोक-संग्रह के भाव से किया गया हमारा कार्य समाज के लिए तो लाभदायक होता है स्वयं हमारे लिए भी लाभदायक होता है। वस्तुतः यही तो हमें ईश्वर के करीब ले जाता है, अर्थात् लोक-संग्रह हमारी मुक्ति का द्वार है। हमारे कर्मों का उद्देश्य

लोक संग्रह यानी लोक निर्वाह है।
हमारे कर्मों के समष्टिगत
सामंजस्य से ही लोक यानी संसार का
हित तत्व है। लोक संग्रह लोक यानी संसार
तथा संग्रह यानी निर्माण या निर्वाह शब्द
अर्थ से अभिहित है। गीता का उद्देश्य
कर्म करने की सर्वोत्तम प्रेरणा प्रदान करना
है। मानव अपनी अपूर्णता के कारण अक्सर
द्वन्द्व में फंसता है। संस्कार एवं
अन्य कारण प्रदत्त दृष्टियाँ हमारे प्रत्येक
निर्णय पर हावी रहती हैं, गीता में बड़ी चतुराई
से एक समष्टिमय दृष्टि प्रदान करने की
चेष्टा श्री कृष्ण द्वारा की गई है। स्थित
प्रज्ञता, निष्काम कर्म, स्वधर्म, लोकसंग्रह
आदि का गीता प्रदत्त संदर्भ अल्पबुद्धि
सम्पन्न मानव के लिए अग्राह्य या [illegible]
न हो जाए, इसके लिए मानव के समक्ष
गीतकार ने लोकसंग्रह को एक महान
उद्देश्य के रूप में उपदेशित करने का
कार्य किया है। यह आदिकाल से स्पष्ट
है कि प्रत्येक कार्य का परिणाम (फल) भी
अवश्य होता है। परन्तु गीताकार ने
शुभ फल की मायावी कामना से कर्ता
को सदा विरक्त रहने का सलाह दिया
है। कर्ता, कर्म, फल का स्मरण प्राप्ति
के ध्येय से न करें — यह गीताकार
का उपदेश मानव को कर्म नहीं करने
की ओर प्रेरित न करें के विचार
से लोकसंग्रह का उद्देश्य आता है।

FEBRUARY '20
M T W T F S S
1 2
3 4 5 6 7 8 9
10 11 12 13 14 15 16
17 18 19 20 21 22 23
24 25 26 27 28 29

MARCH '20
M T W T F S S
30 31 1
2 3 4 5 6 7 8
9 10 11 12 13 14 15
16 17 18 19 20 21 22
23 24 25 26 27 28 29

APPOINTMENTS / MEETINGS

गीता के अनुसार कर्म निष्काम होना
8 AM चाहिए न कि निरुद्देश्य। हमारे कर्मों
का उद्देश्य लोकसंग्रह यानी लोक निर्वाह
9 है। हमारे कर्मों के समष्टिगत सामंजस्य से
ही लोक यानी संसार का अस्तित्व है। कर्म
10 करना हमारा 'स्वधर्म' है जिसका परिणाममात्र
लोक संग्रह समझना चाहिए। लोकसंग्रह
11 विधाता की एक आवश्यक योजना है जिसे
हम सभी भुलाकर संसार में अपने लिए या
12 परार्थ के लिए कर्म समझने लगते हैं। लोक-
संग्रह की प्रवृत्तिवाले कर्ता ईश्वर को प्राप्त
1 PM करते हैं। परमसिद्धि सर्वभूत हित में रत रहने से
प्राप्त हो जाती है। इसके लिए जनक आदि का
2 उदाहरण प्रस्तुत किया गया है। गीता में
स्पष्ट कहा गया है कि अनासक्त होकर
3 लोक-संग्रह करते हुए कार्य करना चाहिए।
यदि संसारी जन कर्म करने की प्रवृत्ति को
4 त्याग दें तो पूरा जगत ही अव्यवस्थित हो
जाएगा। अतएव लोकसंग्रह हेतु कर्मों का
5 किया जाना एक अनिवार्य कार्य है।
गीता का पूरा संदर्भ ही
6 लोक कल्याणार्थ कर्म - सम्पादन होने की प्रेरणा
उत्पन्न करता है। गीता में निष्काम कर्म का
उपदेश सर्वत्र दिया गया है। इस अर्थ में
एक प्रश्न यह उठता है कि क्या लोककल्याण
या लोक-संग्रह का उद्देश्य हमारे कर्मों को
सकाम नहीं बना देता है। इस संदर्भ में कुछ
मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर हमें गौर करना होगा।
गीता में व्यापक स्तर पर मानव चेतना के

द्वन्द्व से बचाने हेतु निष्काम कर्म पर प्रकाश डाला गया है, साथ ही द्वन्द्व में नहीं रहने से मानव अपने कर्तव्यों यानी कर्म की ओर अग्रसर भी होता है। गीता में लोक संग्रह मानव का उद्देश्य नहीं है, यह उद्देश्य तो ईश्वर या विधाता का है। यहाँ मात्र कर्मों की उपादेयता स्पष्ट करने हेतु 'लोक-संग्रह' की बातें की गई हैं तथा अपने कर्तव्यों में समाष्टि में सेवा प्रदान करना मानव का स्वधर्म है। इस स्वधर्म से मानव मोक्ष प्राप्त कर सकता है। यही गीता का कर्मयोग है।

2. लोक संग्रह वस्तुतः मानव का एक नैतिक कार्य भी है, गीता का तात्पर्य समझने हेतु गीताकार के उपदेशों का प्रसंग समझना अनिवार्य है। प्रो. हिरियन्ना मानते हैं कि गीता का तात्पर्य कर्म मार्ग को स्पष्ट करना है। ऐसा नहीं होने से केवल देश ही नहीं अपितु पूरी नैतिकता ही खतरे में पड़ जाती। इस प्रकार हमारे कर्मों की उपादेयता व्यक्तिगत सुख-दुःख में नहीं वरन सम्पूर्ण जगत के कल्याण में निहित है। निवृत होकर कर्म करने में लोक संग्रह होता है। यह कर्म मोक्षदायक भी होता है। प्रवृत होकर कर्म करने से मानव सुख-दुःख, प्रेम, घृणा व अनेक बौद्धिक द्वन्द्व में पड़ सकता है तथा इसके समक्ष कर्म नहीं।

करने यानी कर्ममुक्त रहने की इच्छा जाग जाती है। जो एक व्यवस्थित जीवन समाज तथा जगत के लिए खतरनाक है। इसलिए गीता में वर्णित लोकसंग्रह की भावना हमें जाग्रत करने का कार्य करता है। इससे हमारा मानसिक और बौद्धिक स्तर भी ऊँचा उठता है तथा मानवोचित कर्म करने से आत्म संतोष प्राप्त होता है। गीता का लोकसंग्रह धारणा एक नैतिक धारणा है जिसे मानव को व्यवहार में उतारना चाहिए। गीता का उद्देश्य ही है।

"परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे॥"

इन पंक्तियों में लोक-संग्रह की भावना ही है।